कवि देवचद्धजीनी एक अप्रगट रचना
''रत्नाकर पच्चीसीभास''

- सं. मुनिसुजसचन्द्र-सुयशचन्द्रविजयौ

आत्मज्ञाननी सर्वश्रेष्ठ कक्षाए पहोंचेला श्रेष्ठयोगीनी तत्वप्रचुर संवेदना एटले पू. देवचन्द्रजीनी स्तवनावली, अथवा बीजी रीते विचारीए तो सूक्ष्म पदार्थोनो रसास्वाद करावती सुमधुर पद्य रचनाओ.

प्रस्तुत कृति पू. देव**चन्द्र**जीनी तात्त्विक रचनाओमांनी एक अप्रगट रचना छे. पू. **रत्नाकरसूरि**जीए युगादीश श्रीआदिजिन समक्ष दोषोनी आलोचना करता '**रत्नाकरपञ्चविंशिका**' नामनी संस्कृत कृतिनी रचना करी. पू. देवचंद्रजीए मूळ संस्कृत पद्योना भावोनुं उद्धरण करी गुर्जर पद्यानुवाद रूपे सौ प्रथम ''**रत्नाकर पञ्चविंशिका भास**'' नामनी कृतिनी रचना करी.

कृतिमां कुल ३४ पद्यो छे. तेमां २८ पद्यो सुधी मूळ संस्कृत कृतिना भावोनो अनुवाद करी अन्त्य पद्योमां जिनमतविरुद्ध प्ररूपणा, 'तत्त्वप्ररूपक' उपमाथी गर्व जेवा जेवा विशेष अतिचार (दोषो) पर प्रकाश पाड्यो छे. कृतिना अन्तमां पोतानी गुरुपरम्परा नोंधी ग्रन्थनुं समापन कर्युं छे.

देवचन्द्रजीना जीवनचरित्र उपर तथा तेमना साहित्य ऊपर घणुं साहित्य प्रकाशित थयेलुं छे. माटे ते माटे ते कृतिओ जोइ लेवा जिज्ञासुओने निवेदन छे.

शब्दकोश

१. गद = रोग
२. दाव = अनुकुळ समय, लाग
३. मावीत्र = माता-पिता
४. रस्य = रस
५. चूंप = ?
६. परिपदा = उपनाम/पदवी(?)
७. घूसियो =
८. धायुं = ध्यायुं-ध्यान कर्युं
९. कल्या = जाण्या
१०. कोज्य =
११. विट = व्यभिचारी माणस
१२. कारा = जेल ?
१३. निदांन = कारण
१४. आश्चर = आश्चर्य(?)

अर्हं नमः ऐं नमः

॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

श्रेयश्रीरतिगेह छो जी, सुरनरपती नतपाय
सर्वजांण अतीसंनिधिजी, जय उपयोगी अभाय
जगतगुरू ! विनतडी अवीधार. १

जगआधारक पामयिजी, नीकारण जगबंधु,
भववीकारगद[१] टालवाजी, वैद्य छो गुणसिंधु, जगतगुरु !..... २
जांण भणि जे भाख्यवोजी, ते तो भोलीमभाव,
पिण अशुधता आपणीजी, वीनवीये लही दाव[२], जगतगुरु !..... ३
मावीत्र[३] आगें बालकेजी, स्यूं जि जै न कहाय,
साचूं पश्चातापथीजी, निज आसय कहेवाय, जगतगुरु !..... ४
दान-सीयल-तप-भावनाजी, जीन आणाए न किध
वृथा भम्यो भवसायरेजी, आतमहित नवी लीध, जगतगुरु !..... ५
क्रोध अग्नी दाध्यो घणोजी, लोभ मोहोरग दृष्टि,
मांन ग्रह्यो माया कल्योजी, केम सेवूं परमेष्ठि, जगतगुरु !..... ६
हीत न कर्यो में परभवेजी, इहां पिण नहीं सुख चूंप[४] (?),
हो प्रभू ! अम भव सत्यकथाजी, केवल पूरणरूप, जगतगुरु !..... ७
प्रभूमुखचंद्र संयोगथिजी, माहानंद रस्य[५] जोर,
नवि प्रगट्यो तेणे वज्रथिजी, मुझ मन अतिय कठोर, जगतगुरु !..... ८
भव भमियो दुर्लभ लहिजी, रत्नत्रय तुम साथ,
ते हारी निज आलसेजी, किहां पूकारुं नाथ, जगतगुरु !..... ९
मोहविजय वैराग्य जे जी, तेह पररंजन कांम,
निज पर तारण देसनाजी, ते जनरंजन ठांम, जगतगुरु !..... १०
विद्यातत्त्व परिपदाजी[६], ते परजिपणढाल,
परमदयाल केति कहूंजी, मुझ हासानी चाल्य, जगतगुरु !..... ११
परनंद्या मुख दुहव्योजी, परदुख चिंत्यो रे मन,
पर अस्त्री जोवे आंखडिजी, किंम थासे हुं धन्न, जगतगुरु !..... १२

कांम वषे विषय पणेजी, भोग विडंबनि वात,
ते सूं कहिये लाजताजी, जांणो छो जगतात, जगतगुरु !..... १३
परमात्मपद निपजेजि, श्रीनवकार प्रभाव,
ते कुमंत्रे घूसियोंजि, इंद्रिसुखने हाय(व), जगतगुरु !..... १४
श्रीजिनआगम दुखव्योजी, करी कुशास्त्रनो संग,
अणाचार अति आचरुंजी, भूले कुदेवनो संग, जगतगुरु !..... १५
द्रष्टिप्राप्य प्रभूमुख तजीजी, धार्युं[९] नारिरूप,
घहन विषयविषधुम्रथिजी, न ग्रह्यूं आत्मस्वरूप, जगतगुरु !..... १६
मृगनयनि मूख निरखतांजी, जे लाग्यो मन राग,
न गयो सु(श्रु)तजल धोयतांजी, कुंण कारण माहाभाग्य, जगतगुरु !..... १७
अंग चंग गुण नवि कल्यांजी, नवि वर प्रभुता रे कांइ,
तो पिण माचूं लोकमाजि, मांनविडंबित कांइ, जगतगुरु !..... १८
प्रतिक्षण आओखो घटेजि, न घटे पातिक बुध,
जोवनवय जातां थकाजि, विषयाभिलाष प्रवृधि, जगतगुरु !..... १९
ओषधतंनु रखवालवाजि, सेव्या आश्रव रकोज्य[१०] (?)
पिण जैनधर्म न सेवियोजि, है ! है ! मोह मरोज्य, जगतगुरु !..... २०
जिव-कर्म-भव-सिव नही[जी], विट[११]मूखवांणि रे पिघ
तुज केवलरवि ओगयेजि, आप संभाल न लिध, जगतगुरु !..... २१
पात्र भकति जिन पूजनाजी, नवि मुनी-श्रावकधर्म,
रत्नविलाप पेरे कर्योजी, मुझ माणसनो जन्म, जगतगुरु !..... २२
जिनधर्म सुख फरसतांजि, सेववा विषय विभाव,
सुरमणि-सुरघट एहनांजि, ए छे मूढ सभाव, जगतगुरु !..... २३
भोगलीला ते रोग छे जी, धन ते निधन समांन,
दारा कारा[१२] नरकनिजी, न विचार्यूं ए निदांन[१३], जगतगुरु !..... २४
साधूआचार न पालियोजि, न कर्यो पर उपगार,
तिरथउधार न निपन्योजि, ते गयो जन्मारो हार, जगतगुरु !..... २५
दूरिजन वचन खमे नहिजी, सूतजोगे न विराग,
लेस अध्यात्म नवि रम्योजि, किम लहस्यूं भवत्याग, जगतगुरु !... २६

न कर्यो धर्म गये भवेजी, करवूं पिण अतिकष्ट,
वृतमांन भवरागताजी, तेणे गण्य भव नष्ट, जगतगुरु !..... २७
प्रभु आगल सुं दाखवुंजि, मुझ आश्चर[१४] परिवार,
तिनकाल जीण ! जांण छो जी, तरियो तुज आधार, जगतगुरु !..... २८
भद्रक बुद्धे मुनि नमेजि, तेहमां हरखुं रे आप,
मुनिपद हासि करुंजी, ते सगलो संताप, जगतगुरु !..... २९
जिनमत वितथ परूपणाजी, करतां न गणि भित,
जस-ईंद्रीसुख लालचेजी, किधो काल वति(ती)त, जगतगुरु !..... ३०
तत्वातत्त्व गवेसणाजी, करवूं पिण अतिदूर,
तत्वपरूपक मानथि जि(जी), विस्तार्यो भव भूर, जगतगुरु !..... ३१
तुम सम दिनदयालूओजि, नवि बिजो जिनराज,
दयाठांम मुझ सरिखोजि, छे बिजो कुण आज, जगतगुरु !..... ३२
श्रीसीधाचलमंडणोजि, रिषभदेव जिनराज,
रत्नसागरसूरि स्तव्योजि(जी), निर्मल समकितकाज, जगतगुरु !..... ३३
निज नाण-दर्सण-चरण-वि(वी)रज, परमसुख रयणायरो,
जिनचंद्र नाभिनरिंदनंदन, त्रिजगजिवन भायरो,
उवज्झायवर श्री**दि(दी)पचंद**, सिस गणी **देवचंद्र** ए
संगभक्ती भविक जिवने, करो मंगलवृंद ए ॥ जगतगुरु !.....३४

॥ इति श्री रत्नागर पच्चीसीनी भास संपूर्णः ॥

—x—